National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(62): 20-23
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. पूजा कुमारी
सहायक प्रोफेसर ,
संस्कृत विभाग, पन्नालाल गिरधरलाल-दयानंद एंग्लो-वैदिक कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय -110065

Correspondence:
डॉ. पूजा कुमारी
सहायक प्रोफेसर ,
संस्कृत विभाग, पन्नालाल गिरधरलाल-दयानंद एंग्लो-वैदिक कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय -110065

वेदों में आयुर्वेदिक चिकित्सा

डॉ. पूजा कुमारी

वेदों का ज्ञान ही मानव जीवन में सुख और शान्ति प्रदान करता है अज्ञान, निराशा, अनाचार और आधि-व्याधि की मुक्त वेदों के माध्यम से हो सकती हैं। जैसे-मनु का कथन है कि 'सर्वज्ञानमयो हि सः'[1] वेदों में सभी विद्याओं का भंडार है। वेदों में आयुर्वेद-विषयक सैकड़ों मन्त्र हैं, जिनमें विविध रोगों की चिकित्सा वर्णित है। अथर्ववेद को भेषज अर्थात् भिषग्वेद के नाम से पुकारा गया है। चरक और सुश्रुत में आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपांग बताया गया है। इससे ज्ञात होता है कि आयुर्वेद का उद्गम स्रोत अथर्ववेद है। ऋग्वेद और यजुर्वेद में भी आयुर्वेद-विषयक पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। आयुर्वेद जीवन का मुख्य अंग है, जन्म से लेकर मृत्यु तक की अवस्थाओं का वर्णन है। जैसे कवि कालिदास ने भी कहा है कि- 'शरीरमाद्यं खुल धर्मसाधनम्' स्वस्थ शरीर के माध्यम से ही मनुष्य चतुष्ट पुरूषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) की प्राप्ति सम्भव है। इसी प्रकार मनुष्य जीवन आधि (मानसिक रोग) और व्याधियों (शारिरीक रोग) की चिकित्सा आयुर्वेद द्वारा ही संभव हैं। इसीलिए आयुर्वेद को पूण्यतम वेद भी कहा गया है- **तस्यायुषः पुण्यतमो वेदो वेदविदां मतः। वक्ष्यते यन्मनुष्याणां लोकयोरुभयोर्हितम्।**[2]

आयुर्वेद किसी देश-विशेष की चिकित्सा नहीं हैं। यह तो आयु का वेद (**Science of Life**) है, जो सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा प्राणिमात्र के लिये है। आयुर्वेद के प्रायः सभी प्राचीन संहिताओं में आयुर्वेद के प्रारम्भिक ज्ञान परम्परा का दिग्दर्शन किया गया है। ऐसा समझा जाता है कि आयुर्वेद का ज्ञान देवलोक से मृत्युलोक में आया। इसे ही आयुर्वेदावतरण (आयुर्वेद का आगमन) कहते है। इस प्रंसग में यह भी कहा गया है कि आयुर्वेद का अवबोध (ज्ञान) ब्रह्मा को सर्वप्रथम स्मरणपूर्वक हुआ था। ब्रह्मा से दक्ष प्रजापति, दक्ष से अश्विनीकुमारों (नासत्य एवं दस्त्र) और अश्विनीकुमारों से इन्द्र ने आयुर्वेद को यथावत् प्राप्त किया। चरक, सुश्रुत, काश्यप, वाग्भट, हारीत एवं भाव प्रकाश में यही परम्परा दी गयी है। इसे 'प्रागैतिहासिक काल' कह सकते है

आयुर्वेद प्रयोजन

आयुषों वेदः आयुर्वेद अर्थात् जिस शास्त्र में दीर्घायु का ज्ञान प्राप्त हों। चरक, सुश्रुत और अष्टांग हृदय में आयुर्वेद शास्त्र का विस्तृत रूप से वर्णन किया गया है, आयुर्वेद का मुख्य रूप से दो उद्देश्य है आरोग्य को बनाये रखना और रोगों से मुक्त रखना। आयुर्वेद का तात्पर्य है आयुषो वेदः आयुर्वेद अर्थात् दीर्घायु जीवन के उपाय जिस शास्त्र में हो वह आयुर्वेद है। महर्षि चरकानुसार आयुर्वेद का तात्पर्य है- **"हिताहितं सुख दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्। मानं च तच्च यत्रोक्तम्, आयुर्वेदः स उच्यते॥**[3]" जिस शास्त्र में हित, अहित, सुख और दुःख आयु के लिए पथ्य और अपथ्य आहार, उसका आयु का मान (प्रमाण और अप्रमाण) के साथ आयु का स्वरूप हो। आचार्य सुश्रुत कहते है कि- **"आयुरस्मिन् विद्यतेऽनेन वा आयुर्विन्दतीति आयुर्वेदः।**[4]" जिसमें आयु के हितकर और अहितकर तत्त्वों का विचार हो व दीर्घ आयु प्राप्त कराता है, वह आयुर्वेद है

आयर्वेदिक आचार्योंनुसार रोग का तात्पर्य है- "धातुसाम्यक्रिया प्रोक्ता तन्त्रस्यास्य प्रयोजनम्।"[5] अर्थात् त्रिदोष व सप्त धातुओं की विषमता और इनकी समता ही नीरोगता हैं।

वेदों में आयुर्वेद

आदिकाल से ही वेद मानवजाति के लिए प्रकाश स्तम्भ रहे हैं। वेदों में ज्ञान और विज्ञान का अनन्त भंडार विद्यमान है। आयुर्वेद शास्त्र की दृष्टि से वेदों का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि चारों वेदों में आयुर्वेद के विभिन्न अंगों और उपांगों का यथास्थान विशद वर्णन हुआ है। आयुर्वेद विश्व की प्राचीनतम चिकित्सा पद्धति ही नहीं है, अपितु यह अथर्ववेद का उपवेद है। काश्यय संहिता एवं ब्रह्मवैवर्त पुराण में इसे "पञ्चमवेद" कहा गया है। अन्य वेद केवल परलोक हितकर है, जबकि आयुर्वेद दोनों लोकों के लिए हितकर है।

ऋग्वेद और आयुर्वेद

ऋग्वेद में आयुर्वेद के महत्त्वपूर्ण तथ्यों का यथास्थान विवेचन प्राप्त होता है। इसमें आयुर्वेद का उद्देश्य, वैद्य के गुण-कर्म, विविध ओषधियों के लाभ आदि, शरीर के विभिन्न अंग, विविध चिकित्साएँ, अग्नि-चिकित्सा, जलचिकित्सा, वायुचिकित्सा, सूर्यचिकित्सा, शल्यचिकित्सा, हस्तस्पर्श-चिकित्सा, यज्ञचिकित्सा, विष-चिकित्सा, कृमिनाशन, दीर्घायुष्य, तेज, ओज, नीरोगता, वशीकरण, कुस्वप्न-नाशन आदि का विशिष्ट वर्णन प्राप्त होता है।[6]

यजुर्वेद और आयुर्वेद-

यजुर्वेद में आयुर्वेद से संबद्ध निम्नलिखित विषयों की सामग्री प्राप्त होती है: वैद्य के गुण-कर्म**,** विभिन्न ओषधियों के नाम आदि शरीर के विभिन्न अंग, चिकित्सा, दीर्घायुष्य, नीरोगता, तेज, वर्चस्, बल, अग्नि और जल के गुण-कर्म आदि।[7]

सामवेद और आयुर्वेद

सामवेद में आयुर्वेद-विषयक सामग्री अत्यन्त न्यून है। परन्तु ऋग्वेद की भांति सामवेद में भी आयुर्वेद सम्बन्धी मंत्रों का उल्लेख मिलता है जैसे**-** आयुर्वेद से संबद्ध कुछ मंत्र निम्नलिखित विषयों के प्रतिपादक हैं-वैद्य, चिकित्सा, दीर्घायुष्य, तेज, ज्योति, बल, शक्ति आदि ।[8] इसमें अधिकतर मन्त्र ऋग्वेद के ही हैं। इसमें जल, वायु, अग्नि आदि द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा, जल-चिकित्सा, वायु-चिकित्सा, अग्नि चिकित्सा आदि करने का वर्णन है। इतना ही नहीं उस समय के चिकित्सकों को सूर्यरश्मि चिकित्सा तथा औषधियों द्वारा औषधि चिकित्सा का भी सम्यक रूप से ज्ञान था।

अथर्ववेद और आयुर्वेद-

आयुर्वेद की दृष्टि से अथर्ववेद अत्यन्त महनीय ग्रन्थ है। इसमें आयुर्वेद के प्रायः सभी अंगों और उपांगों का विस्तृत वर्णन मिलता है। अथर्ववेद आयुर्वेद का मूल आधार है। इसमें आयुर्वेद से संबद्ध निम्नलिखित विषयों का वर्णन प्राप्त होता है**-** भिषज् या वैद्य के गुण-कर्म, भैषज्य, शरीरांग, दीर्घायुष्य, नीरोगता, तेज, वर्चस्, वशीकरण, वाजीकरण, रोगनाशक, विभिन्न मणियाँ, विविध ओषधियों के नाम और गुण-कर्म, रोगनाम एवं चिकित्सा, कृमिनाशन, सूर्यचिकित्सा, जलचिकित्सा, विषचिकित्सा, पशुचिकित्सा, प्राण-चिकित्सा, शल्य-चिकित्सा आदि।[9]

वेदों में आयुर्वेदिक चिकित्सा

वैदिक साहित्य में सभी रोगों की उत्पति के मुख्य कारण निम्नप्रकार से है- १. आन्तरिक विषों (मलादि) का संचय और त्रिदोष (वात्त, पित, कफ) की विषमता रोगों का कारण बन सकता है।[10] २.जीवाणु (दृष्ट व अदृष्ट कृमि) से रोग उत्पत्ति का वेदों मे विस्तृत रूप से वर्णन मिलता हैं।

अथर्ववेदानुसार चतुष्ट चिकित्सा

अथर्ववेद में रोगों के निवारण के लिये चार प्रकार की ओषधियों और चिकित्सा विधियों का उल्लेख मिलता हैं[11]

१. आथर्वणी चिकित्सा –

इस चिकित्सा विधि का संबन्ध अथर्वा ऋषि से माना जाता हैं। इस चिकित्सा में ध्यान, मनन, चिन्तन और मनोयोग से होने वाली चिकित्सा का समावेश है। इसीलिये इसे मानस चिकित्सा विधि या Psycho-Therapy भी कहते है। इसमें मंत्रशक्ति, जप, पूजा-पाठ, आश्वासन-प्रक्रिया आदि विधि के द्वारा प्राणशक्ति में वृद्धि और रोग का किया जाता है।[12] इसके माध्यम से मनोबल इच्छाशक्ति में वृध्दि होती हैं, इसीलिये इसको Auto-Suggestion की विधि में भी माना जाता है।[13]

२. आंगिरसी चिकित्सा-

इसका संबन्ध अंगिरस्/अंगिरा ऋषि से है। अंगिरस् की व्याख्या गोपथ और शतपथ ब्राह्मण में अंग-रस की गई है।[14] अंगों के रस से होने वाली चिकित्सा आंगिरसी कहलाती हैं, अंग रस का तात्पर्य हैं**-** रक्त आदि दूसरों को चढ़ाना, शरीर में बाह्य रसों को पहुँचाना, शरीर में अन्य कार्यशील तत्त्वों को पहुँचाना, वृक्ष-वनस्पति आदि के पोषक तत्त्वों को शरीर में पहुँचाना, रोगी के शरीर में अन्य शक्ति-प्रेरक तत्त्वों को पहुँचाना आदि का समावेश कराना ही आंगिरसी चिकित्सा कहलाती हैं। इस चिकित्सा पद्धति में Allopathic पद्धति के अनुरूप साम्यता भी मिलती हैं।

वेदों में आंगिरसी चिकित्सा कर्मकाण्ड रूप से दूसरे रूप में भी व्याख्या की हैं जैसे कौषीतकि ब्राह्मण, शांखायन श्रौतसूत्र, आश्वलायन श्रौतसूत्र और छान्दोग्य उपनिषद् में आंगिरस को घोर

आंगिरस नाम से संबोधित किया गया है।[15] अंगिरा ऋषि द्वारा दृष्ट मंत्रों में व्रण-चिकित्सा, शत्रुनाशन, शत्रुसेनानाशन, मणि द्वारा समस्त रोगों शत्रुओं और राक्षसों के नाशन आदि का वर्णन किया गया है।[16] आंगिरस चिकित्सा विधि में ही शल्यक्रिया (Surgery) की विधि का भी समावेश है।

३. दैवी चिकित्सा-

पंचमहाभूत तत्त्व (पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश) देव कहलाते हैं। मुख्य रूप से मृत्-चिकित्सा, जलचिकित्सा, अग्नि-चिकित्सा, वायु-चिकित्सा, सूर्य-चिकित्सा, प्राणायाम-चिकित्सा आदि चिकित्साएँ दैवी चिकित्सा के अन्तर्गत आती है। प्राकृतिक चिकित्सा और Naturopathy का भी इसी चिकित्सा में समावेश हैं।

४. मनुष्यजा चिकित्सा-

यह मनुष्य द्वारा बनाई गई चिकित्सा है**,** इसमें चूर्ण, अवलेह, भस्म, कल्प, आसव, वटी आदि सम्मलित हैं। इस चिकित्सा को ओषधि चिकित्सा भी कहते है, अतः इसे Drug-Therapy कह सकते हैं।

अष्टांग आयुर्वेदिक चिकित्सा

आयुर्वेदिक ग्रन्थ चरक, सुश्रुत और अष्टांगहृदय में आयुर्वेद के आठ अंगों का उल्लेख मिलता है ये ही अष्टांग आयुर्वेदिक चिकित्सा के नाम से जाने जाते हैं। जैसे- आचार्य सुश्रुतानुसार आयुर्वेदिक अष्ट अंग नाम**-** १. शल्यचिकित्सा, २. शालाक्य चिकित्सा, ३. कायचिकित्सा, ४. भूतविद्या, ५. कौमारभृत्य, ६. अगद तन्त्र, ७. रसायन तन्त्र ८ वाजीकरण तन्त्र।[17] आचार्य चरकानुसार आयुर्वेदिक अष्ट अंग नाम-१ कार्यचिकित्सा २. शालाक्य, ३. शल्यापहर्तृक (शल्य तंत्र), ४. विषगर-वैरोधिक प्रशमन (अगदतंत्र), ५. भूतविद्या, ६. कौमारभृत्य, ७. रसायन, ८. वाजीकरण।[18] अष्टांगहृदय में इनके नाम हैः-१. कायचिकित्सा, २. बालचिकित्सा, ३. ग्रहचिकित्सा, ४. ऊर्ध्वांग चिकित्सा, ५. शल्यचिकित्सा, ६ दंष्ट्राचिकित्सा (विषचिकित्सा), ७ जराचिकित्सा (रसायन), ८. वृषचिकित्सा (वाजीकरण)।[19]

१. कायचिकित्सा का तात्पर्य संपूर्ण शरीर की चिकित्सा अर्थात् शरीर के समस्त अंगों के रोगों की चिकित्सा कायचिकित्सा कहलाती हैं। आयुर्वेद में काय का अर्थ जाठराग्नि से लिया गया है, तदनुसार अर्थ है जठर (पेट) संबन्धी अग्नि की चिकित्सा ।

२. बालचिकित्सा (कौमारभृत्य)**-** बालको का भरण-पोषण और उनके रोगों की चिकित्सा करना कौमारभृत्य चिकित्सा कहलाती हैं। इसे Science of Paediatrics भी कहा जाता हैं ।

३. ग्रहचिकित्सा**(**भूतविद्या**)-** इस चिकित्सा में दैवी विपत्तियों एवं ग्रहों आदि के कुप्रभाव को दूर करने के लिए शान्तिकर्म आदि का विधान किया जाता हैं। इस चिकित्सा को Demonology कहते हैं।

४. ऊर्ध्वांग चिकित्सा(शालाक्य चिकित्सा)**-** इस चिकित्सा में शरीर मे गले से ऊपरी भाग के सभी अंगों अर्थात् आँख, नाक, कान, गले आदि के रोगों की चिकित्सा का समावेश है। इसे कायचिकित्सा का अंग भी माना जाता है।

५. शल्यचिकित्सा (शल्यतंत्र)**-** इस चिकित्सा में तीक्ष्ण औजारों आदि के द्वारा चीर-फाड़ आदि का कार्य करके शरीर के दूषित तत्त्वों को निकाला जाता है। इसे विधि को Surgery कहते हैं।

६. विषचिकित्सा- इस चिकित्सा को अगदतंत्र, दंष्ट्राचिकित्सा, विषगर-वैरोधिक-प्रशमन भी कहते हैं। इस चिकित्सा में सर्प आदि किट के विष को दूर करने का विधान है। इसे Toxicology कहते हैं।

७. रसायनतन्त्र (जराचिकित्सा)**-** इस चिकित्सा के माध्यम से अधिक समय तक युवावस्था को बनाए रखा जा सकता हैं। वृद्धावस्था के प्रभाव को दूर करना और शारीरिक शक्ति को बढ़ाने के उपायों का वर्णन इसमें मिलता है।

८. वाजीकरणतन्त्र(वृषचिकित्सा)**-** शुक्ररहित को शुक्रयुक्त बनाने की विधि को वाजीकरण कहते हैं। इस चिकित्सा के द्वारा वीर्यहीन को भी वीर्ययुक्त बनाया जा सकता हैं।

इस प्रकार वेदों में कायचिकित्सा, विषचिकित्सा, शालाक्य-चिकित्सा, शल्यचिकित्सा आदि का विस्तार रूप से वर्णन मिलता हैं और बालचिकित्सा, ग्रहचिकित्सा और वाजीकरण आदि चिकित्साओं का प्रसंग अल्पमात्रा में वर्णन मिलता हैं।

वेदों में नीरोगता

वेदों में नीरोगता और दीर्घायु के लिये विभिन्न प्रकार के आयुर्वेदीक तत्त्वों का उल्लेख किया हैं। अथर्ववेद में पाँच आरोग्यकारक तत्त्वों का उल्लेख मिलता हैं**:-** पर्जन्य (वर्षा का जल)**-** वर्षा का जल शुद्ध और रोगनाशक है। मित्र (प्राणशक्ति)**-** प्राणवायु शरीर को शक्ति प्रदान करती है। वरुण (जल)**-** जल शरीर के दूषित तत्त्वों को बाहर निकालता है। चन्द्रमा**-** इन्द्रियों और मन को शान्ति एवं शक्ति देता है। सूर्य **-**शरीर का पोषक और रक्षक है। अथर्ववेद का कथन है कि शुद्ध जल व अन्न शक्तिवर्धक और रोगनाशक होता है।[20]

अथर्ववेद में नीरोगता के लिए कुछ नियम बताए गए हैं- ठीक से चबाकर खाया गया भोजन बलवर्धक और पोषक होता है। पानी ठीक ढंग से और उचित मात्रा में पिया जाये तो पिया गया जल रोगनाशक और शरीरशोधक होता है। भोजन शान्ति से और मुख की राल के साथ निगला जाये तो वह उतना ही पौष्टिक और सुपाच्य होता है। शीघ्रता से खाया हुआ भोजन अपाच्य होता है और अजीर्ण (कब्ज) करता है। इसलिए आयुर्वेद में भोजन के लिए तीन नियम बताए गए

हैं:-हितभुक् हितकारी भोजन करना, मितभुक् अत्य या संतुलित मात्रा में भोजन करना, ऋतभुकु सात्त्विक एवं ईमानदारी से कमाया गया अन्न ही खाना।[21]

इस प्रकार ऋग्वेद और अथर्ववेद वेद में मुख्य रूप से मनुष्य की दीर्घायु प्राप्ति के लिये शरीर के अंगों की नीरोगता और आत्मा की अजेयता की प्रार्थना की गई है। इसी प्रकार वेदों में मिलने वाली चिकित्साओं का भी वर्णन विस्तृत रूप से किया गया हैं। चारों वेदों में ओज, तेज, वर्चस् की प्राप्ति के लिये सैकडों मंत्रों का वर्णन किया गया है ताकि मंत्र स्तुति माध्यम से मनुष्य स्वस्थ्य और जीवन दीर्घायु व्यतीत करके हम नीरोग रहते हुये सौ वर्ष से भी अधिक समय तक देखे, सुने, बोले जीवित रहे और उन्नति करे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

<u>प्राथमिक स्रोत</u> :-

१. चरकसंहिता(आयुर्वेददीपिका), काशीनाथ पाण्डेय 'शास्त्री' एवं गोरखनाथ चतुर्वेदी, चौखंबा भारती अकादमी, वाराणसी, प्रथम भाग १९९८

२. सुश्रुतसंहिता, आयुर्वेदतत्वसंदीपिका हिंदीव्याख्या, प्रथम भाग, डॉ. अंबिकादत्तशास्त्री, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, २००२

३. अष्टांगहृदयम्, वाग्भटट्, (निर्मला हिंदी टीकासहित), ब्रह्मानंद त्रिपाठी, चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान, २००३

४. आयुर्वेद का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय (संस्कृत-वाङ्मय का बृहद् इतिहास), उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान लखनऊ, प्रथम् संस्करण- २००६

<u>द्वितीयक स्रोत</u> :-

१. वेदों में आयुर्वेद - द्विवेदी, कपिलदेव, विश्वभारती अनुसंधान परिषद ज्ञानपुर, उत्तर प्रदेश, २००१

२. आयुर्वेद के मूल सिद्धांत एवं उनकी उपादेयता - द्विवेदी, लक्ष्मीधर कालिदास अकादमी, वाराणसी, १९९१

<u>अंतर्जालीय स्रोत</u> – :

१.http://en.wikipedia.org/wiki/World_Health_Organization

सन्दर्भ

[1] मनु०२.७

[2] चरक सू. १-४३

[3] चरक सूत्र० १.४१

[4] सुश्रुत सूत्र० १.२३

[5] चरक सूत्र० १.५३

[6] वेदामृतम् भाग १२, ऋग्वेद सुभाषितावली, पृष्ठ ३३०-३५८

[7] वेदामृतम् भाग ६, यजुर्वेद सुभाषितावली, पृष्ठ १७९-१९६

[8] वेदामृतम् भाग १०, सामवेद सुभाषितावली, पृष्ठ १३७-१४१

[9] वेदामृतम् भाग ११, अथर्ववेद सुभाषितावली, पृष्ठ २२९-३०३

[10] अथर्ववेद ९.८.१०

[11] आथर्वणीराङ्डिरसीर्दैवीर्मनुष्यजा उत। ओषधयः प्र जायन्ते यदा त्वं प्राण जिन्वसि। अथर्व० ११.४.१६

[12] प्राणो वा अधर्वा। शतपथ ब्रा० ६.४.२.१

[13] येऽथर्वाणस्तद् भेषजम्। गो० ग्रा० १.३.४

[14] सर्वेभ्योऽङ्गेग्यो रसोऽक्षरत्, सोऽङ्गरसोऽभवत्, तं वा एतम् अङ्गरसं सन्तम् अङ्गिरा इत्याचक्षते,गोपथ पूर्व० १.७। आङ्गिरसोऽङ्गानां हि रसः। शत० ब्रा० १४.४.१.६

[15] घोर आनिरसोऽध्वर्युः। कौषीतकि ब्रा०३०-६।आश्व.श्रोत.१०.७.४, शांखा० श्रोत० १६.२.१२, छान्दोग्य उप० ३.१७.६

[16] अथर्व० २.३, ७, ७७, ७.६०, १६, ३४, ३५।

[17] सुश्रुत० सूत्र० १.७

[18] चरक० सूत्र० ३०.२८

[19] अष्टांग० सूत्र० १.५.६

[20] अथर्ववेद १.३., १-५

[21] यदश्नामि वलं कुर्वे.। अ. ६.१६५.१